

যন্তু যঃ স্মরেৎ পুণ্ডরীকাক্ষং সবাছাভাস্তরঃ শুচিরিত্যাদৌ শ্রদ্ধধান। অপি স্নানাদিক-
 মাচরন্তি, তৎ তলু শ্রীমন্নারদব্যাসাদিসংপরম্পরাচারগৌরবাদেব। তদুপা তদতিক্রমেহ-
 প্যপরাধঃ শ্রাৎ। তে চ তথা মর্যাদাং লোকশ্চ কদর্যাবৃত্তাদিনিরোধায়ৈব স্থাপিতবন্ত
 ইতি জ্ঞেয়ম্। কিঞ্চ জাতায়াং শ্রদ্ধায়াং সিদ্ধারসিদ্ধৌ চ স্বর্ণসিদ্ধিনিম্পোরিব মদা
 তদমুভূতিচেষ্টেব শ্রাৎ। সিদ্ধিচ্ছাত্র অন্তঃকরণ-কামাদিদোষক্ষয়কারি-পরমানন্দপরম-
 কাষ্ঠাগামি শ্রীহরিশুরগরূপৈব জ্ঞেয়া। তস্যাং স্বার্থসাধনানুপ্রবৃত্তৌ চ দম্ভপ্রতিষ্ঠাদি-
 ময়চেষ্টালেশোহপি ন ভবতি। ন সূতরাং জ্ঞানপূর্বকং মহদবজ্ঞাদয়োহপরাধাশ্চাপ-
 তন্তি, বিরোধাদেব। অতএব চিত্রকেতোঃ শ্রীমহাদেবাপরাধস্তশ্চ স্বচেষ্টান্তরেণাচ্ছ-
 স্বভাবশ্চ ভগবততত্ত্বজ্ঞানাদেব মন্তব্যঃ। যদি বা শ্রদ্ধাবতোহপি প্রারদ্ধাদিবশেন
 বিষয়সম্বন্ধাত্যাসো ভবতি, তথাপি তদ্বাধ্যা বিষয়সম্বন্ধসময়েহপি দৈন্তাত্মিকা ভক্তি
 রেবোচ্ছলিতা শ্রাৎ। যথোক্তম্—জুষমাণশ্চ তান্ কামান্ দুঃখোদর্কাংশ্চ গর্হয়ন্নিত্যত্র,
 বাধ্যমানোহপি মন্তুক্ত ইত্যাদৌ চ। অপি চেৎ সূতরাচার ইত্যাদ্যুক্তশ্চানন্ত্যাক্ষেণ
 লক্ষিতা তু যা শ্রদ্ধা সা খলু যে শাস্ত্রবিধিমুৎসৃজ্য যজন্তে শ্রদ্ধয়াষিতা ইত্যাদিবল্লোক-
 পরম্পরাপ্রাপ্তা ন তু শাস্ত্রার্থাবধারণজাতা। শাস্ত্রীয়শ্রদ্ধায়াস্ত জাতায়াং সূতরাচারদ্বা-
 যোগঃ শ্রাৎ। পরপত্নী পরদ্রব্যোত্যাদিবিমুক্তোষণশাশ্রবিরোধাৎ। মর্যাদাঞ্চ কৃত্যং
 তেন ইত্যাদিনা তদ্বক্তব্যবিরোধাচ্চ। ন তু সা দুরাচারতা তদ্বক্তব্যমহিমশ্রদ্ধাকর্ত্তেব,
 অপিশকেন দুরাচারত্বশ্চ হেয়ত্বব্যঞ্জনাৎ। তথা ক্ষিপ্ৰং ভবতি ধর্মাত্মা শব্দচ্ছান্তি
 নিগচ্ছতি ইত্যন্তরাপ্রতিপত্তেঃ। নাম্নো বলাৎ যশ্চ হি পাণবুদ্ধিরিত্যাदिनापराधाप
 ताच्च। ततः सा श्रद्धा न शास्त्रीयतत्त्वधिकारिणो विशेषणत्वे प्रवेशनीया। किञ्च
 प्रशंसायामेव। तादृशपि श्रद्धया भक्तेः सद्बहेतुत्वं, न तु देवतास्तुरयजनवत् ये
 शास्त्रविधिमुत्सृज्योत्यादावेवास्तु अत्रादृशत्वमिति। अस्याः श्रद्धायाः पूर्णतावस्था तु
 ब्रह्मवैवर्ते—किं सत्यममृतकेह विचारः सम्प्रवर्तते। विचारेहपि कृतेराज्जसता-
 परिवर्जनम्। सिद्धं भवति पूर्णं श्रात् तदा श्रद्धा महाफलैति। तदेव लक्षणे
 श्रद्धांपतिलक्षणेयु संस्र विधीयते, यदृच्छया मयंकथार्दौ जातश्रद्धस्त य इत्यादि मयंकथा-
 श्रवणार्दौ वेत्यादि च। अत एवमनधिकार्याधिकारिविषयत्वविवक्षयैव श्रीभगवन्नारदयो-
 र्वाक्ये व्यवतिष्ठेते। न बुद्धिभेदं ज्ञनयेदज्ज्ञानां कर्मसद्भिनां। ज्ञोषयेत् सर्व-
 कर्माणि विद्वान् युक्तः समाचरन्ति। जूष्पितं धर्मकृतेहनुशसतः स्वभाववक्तुश्च महान्
 व्यातिक्रमः। यद्वाक्यतो धर्म इतीतरः स्थितो न मन्त्रते तस्य निवारणं जनः। इति
 च। एवम् अजितवाक्यं तदधिकारिविषयमेव—स्वयं निःश्रेयसं विद्वान् न वक्तव्यं
 कर्म हि। न राति रोगिणोहपथां बाणतोहपि भिषक्तम इति। अत्र यद्यधि-
 कारितायां श्रद्धैव हेतुः सा चाज्ज्ञा न संभवतीति नैतत् तद्विषयं श्रात्, तथापि
 कथमपि प्राचीनसंस्कारवितर्केन तदधिकारित्वनिर्णयान् न दोष इति ज्ञेयम्। अत्राथो-
 पदेष्टैरेव दोषः श्रात्। अश्रद्धाध्याने विमूखेहप्याश्रुति यश्चापादश हीति वक्ष्यामाणापराध-
 श्रवणात्। अथ प्रकृतममूसरामः। तदेव यो गजयं तदधिकारहेतुं श्चोक्तं कर्म-
 नोहपि यथा भगवत्साम्बुध्याकृपत्वं श्रात्, तथाह स्वधर्मस्यो यजन् यज्ञैरनाभीः काम उक्त्वा।